समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य विविध आयाम

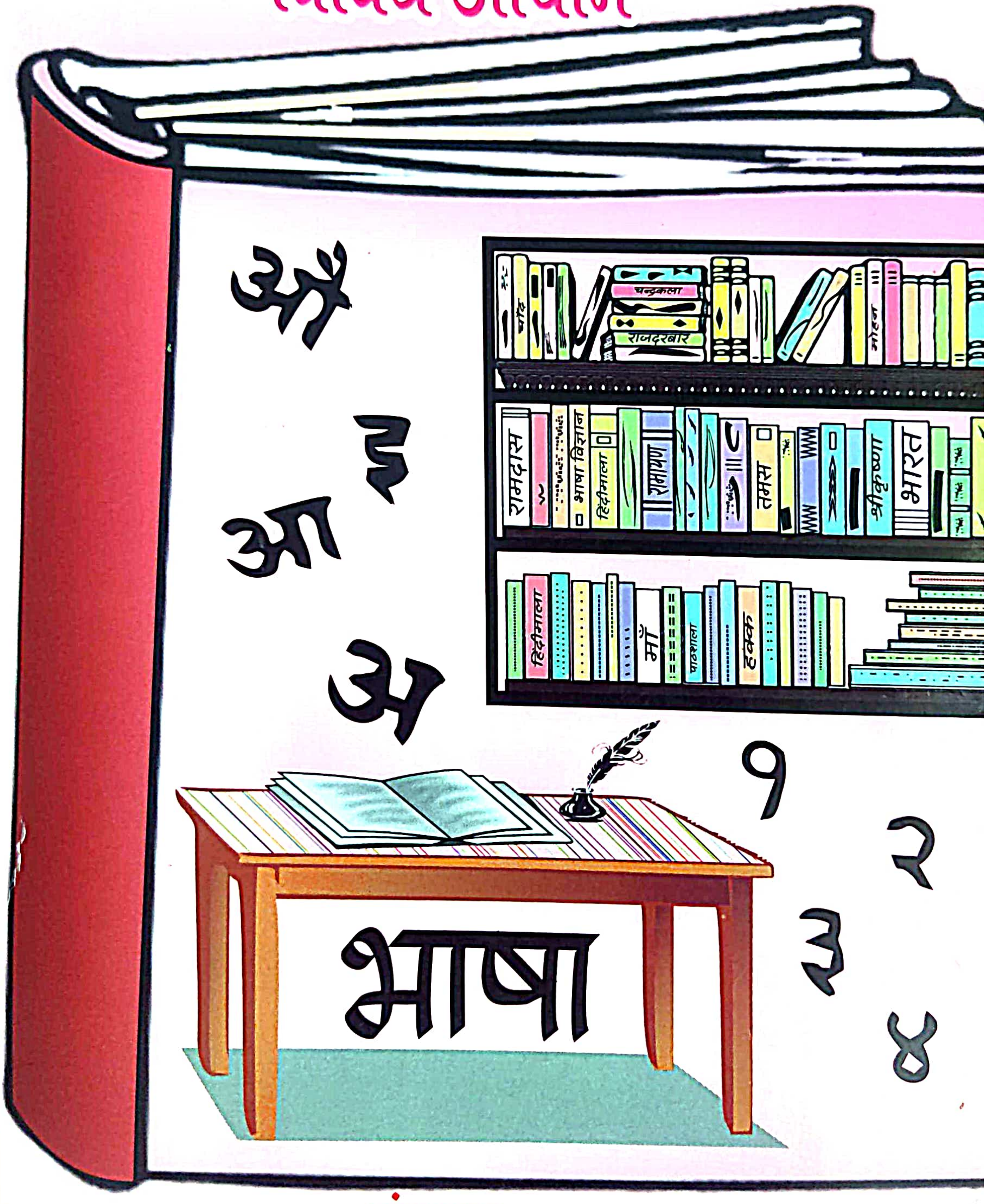

संपादक

डॉ. महानंदा पाटील

समकालीन हिन्दी भाषा
और
साहित्य : विविध आयाम

संपादक

डॉ. महानंदा पाटील

सह–संपादक

रामकुमार

डॉ. राजशेखर जाधव

डॉ. मीनाक्षी बी. पाटील

आर. के. पब्लिकेशन

मुम्बई

ISBN : 978-93-91458-72-0

Copyright © Reserved

प्रथम संस्करण : 2023

मूल्य : ₹ 1100/-

शीर्षक	Title
समकालीन हिन्दी भाषा और साहित्य : विविध आयाम	Samkaleen Hindi Bhasha aur Sahitya : Vividh Aayam
संपादक	Editor
डॉ. महानंदा पाटील	Dr. Mahananda Patil
प्रकाशक	Publisher
आर.के. पब्लिकेशन 1/12, पारस दूबे सोसायटी, ओवरी पाडा, एस.वी.रोड, दहिसर (पूर्व), मुम्बई - 400 068	R. K. Publication 1/12, Paras Dubey Society, Ovari Pada, S. V. Road, Dahisar-East, Mumbai - 400 068

Phone : 9022 521190 / 9821251190
E-mail : publicationrk@gmail.com
Website : www.rkpublication.in

अक्षर संयोजन : राजेन्द्र मिश्र
virar.mishra63@gmail.com

आवरण : सुनील निंबरे, विद्या उम्मर्जी

मुद्रक : सुमन ग्राफिक्स, मुम्बई - 400011

33. समकालीन हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श
- डॉ. गीतांजली सुखसारे 209

34. 'जीवन हमारा' आत्मकथा में दलित संवेदना
- डॉ. राजाबाई गडकर 216

35. हिन्दी का वैश्विक विस्तार
- डॉ. देशमुख अफ़शाँ बेगम अहमद अली 220

36. भारतीय एवं अंग्रेजी महिलाओं के लेखन में एक नारीवादी आवाज़
- प्रो. पी.एस. तोळनूर 227

37. 'संसारनामा' व्यंग्य के परिप्रेक्ष्य में
- डॉ. वर्षा राणी जबड़े 235

38. समकालीन हिन्दी महिला साहित्य एवं संघर्ष
- डॉ. मंजुला एस. चौहान 239

39. समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य में संस्कृति
- डॉ. सुमी चोपड़े 245

40. आधुनिक हिन्दी कहानियों में दलित चेतना और विमर्श
- डॉ. सुकन्या मेरी जे. 249

41. हिन्दी साहित्य में बाल साहित्य पर एक नजर
- डॉ. सुवर्ण गाड 253

42. संस्कृति की भाषा और भाषा की संस्कृति
- डॉ. अजय शुक्ल 261

43. हिन्दी कथा साहित्य में आदिवासी विमर्श (झारखण्ड के संदर्भ में)
- डॉ. सुप्रभा टुटी 266

समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य में संस्कृति

- डॉ. सुमी चोपड़े

संस्कृति किसी भी देश और समाज की आत्मा होती है और साहित्य समाज का दर्पण होता है। विश्व में भारत की संस्कृति सबसे प्राचीनतम संस्कृति है। अनेकता में एकता जिसकी मूलभूत विशेषता है, संस्कृति किसी भी सभ्यता की चरम अवस्था होती है। प्रत्येक संस्कृति की अपनी सभ्यता होती है। संस्कृति से तात्पर्य उस तत्व से है, जो उस देश का, उस स्थान की जनता का संस्कार करती है। भाषा, वर्ण, रहन –सहन की अनेकता को एकता में बांधती है। साहित्य और संस्कृति का पारस्परिक संबंध होता है, अतः कोई भी साहित्यकार अपने समाज और संस्कृति से अछूता नही रह सकता।

रचनाकार जहाँ अपने युग की संस्कृति को प्रभावित करता है, वहीं वह उससे अपने सृजन में प्रेरणाएं भी ग्रहण करता है। कलाकार अपने युग को कुछ देता है तो कुछ लेता भी है। यह लेनदेन विशुद्ध सांस्कृतिक तथा वैचारिक धरातल पर होता है। हमारे साहित्य संस्कार तथा संस्कृति गहरे स्तर पर अपना संबंध बनाए हुए हैं। समकालिन हिन्दी साहित्य पर भी सांस्कृतिक गतिविधियों की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। वस्तुतः यह सांस्कृतिक संक्रमण का युग है।

साहित्य में संस्कृति की चेतना उसी समय उभर सकती है, जब वह यथार्थ से घनिष्ट संबंध रखे तथा उपन्यास आध्यात्मिक, काल्पनिक, समाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक परिवेशों से घिरा हो, उन सबका उचित विश्लेषण करके उन सब को आत्मसाथ करके उनको अभिव्यक्ति प्रदान करता है यही कारण है कि समकालीन उपन्यासों में सांस्कृतिक चेतना की सर्वाधिक अभिव्यक्ति पाई जाती है। हिन्दी उपन्यासों में नवीन संस्कृति का उदय हुआ नवीन शिक्षा, नारी और विवाह, विवाह और भारतीय संस्कृति, पाश्च्यात संस्कृति का प्रभाव, वेश–भूषा, आचार–विचार, खान–पान, रीति–रस्म, लोक गायन, लोक नृत्य, पर्व त्यौहार आदि को लेकर भारतीय संस्कृति का गौरव गान करके सांस्कृतिक चेतना को जगाया।

'जंगल के फूल' बस्तर के आदिवासियों के जीवन को केन्द्र में रख कर लिखा गया राजेन्द्र अवस्थी का सशक्त आँचलिक उपन्यास है। लेखक ने गोंड आदिवासियों की जातीय संस्कृति का उल्लेख किया है। बस्तर के गोंड आदिवासी आज भी आधुनिक सभ्यता से अलग अपनी प्रकृति की गोद में रहना पसंद करते हैं। उनका रहन-सहन, नृत्य-संगीत, सामाजिक व्यवस्था, अर्थ तंत्र, खान-पान सब कुछ प्रकृति के साथ सामंजस्य तथा ताल-मेल के साथ संचालित होता है। यद्धपि वे साक्षर नहीं हैं, परन्तु वनों से अपनी जीविका के साधन को ढूंढ़ निकालना वास्तव में एक अच्छी सोच है। प्रकृति के उपकरण- धरती, आकाश, सूर्य, चंद्र, वन, पर्वत, लता, पेड़, खाई, टिला, सब उनके रिश्तेदारों जैसे हैं। उनके साथ उनका गहरा रिश्ता है। सभ्यता के कोलाहल से दूर जंगलों में रहने वाले आदिवासियों की जीवन गाथा 'जंगल के फूल' में व्यक्त हुई है।

बस्तर के आदिवासियों की सामाजिक, सांस्कृतिक विरासत को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने में 'घोटुल' की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, यह आदिवासी युवक-युवतियों के जीवन का आवश्यक अंग है किन्तु बस्तर के बाहर रहने वाले लोगों को यह एक अजीब चीज लगती है। हर एक गाँव का एक 'घोंटुल' मानों एक प्रकार का 'कुमारगृह' है। 'घोंटुल' की सीमा में एक समतल आंगन होता है, इसी आंगन के बीच में एक 'घोंटुल' खम्बा होता है जिसके चारो ओर घूम-घूम कर 'घोंटुल' के नृत्य गीत सम्पन्न होते हैं। 'घोंटुल' में प्रवेश करने वाले युवक को 'चेलिक' तथा युवती को 'मुटियारिन' कहा जाता है, 'घोंटुल' में प्रति चेलिक और मुटियारिन भक्ति भाव से आते हैं, इसे मंदिर की तरह पवित्र माना जाता है।

नागार्जुन ने 'बलचनमा' में ग्राम्य संस्कृति का सूक्ष्म, यथार्थ, स्वाभाविक तथा सजीव चित्रण किया है।

मेला-त्यौहार- ग्रामीण जीवन में मेलों, त्यौहारों का विशेष महत्त्व है, मेले गाँववालों के लिए उनके बाजार भी होते हैं और सामूहिक उत्सव भी। साल के छः महीने किसी ना किसी उत्सव में ढोल मंजीरा बजते ही रहता है होली के एक महीना पहले से ही फाग उड़ने लगती है। 'बलचनमा' में भी इसी तरह के मेला-तमाशा का वर्णन मिलता है।

लोकगीत-लोकनृत्य- लोकगीत लोककंठ की मौखिक परंपरा की धरोहर है, लोकगीत जनसाधारण के समीप होते हैं। धान काटते समय, चक्की पीसते समय भी गाए जाते हैं

शादी-ब्याह- शादी-ब्याह का वर्णन नागार्जुन ने 'बलचनमा' में सुंदर तरीके से किया है।

"हमारी बिरादरी में शादियां कच्ची उम्र में हो जाती हैं..... और तो कुछ याद ना रहा लेकिन बारात में सिंगा बजाने वालों का नजारा कभी ना भुलूंगा, बड़े मालिक के यहाँ से पालखी मंगाई गई थी, कनेर के फूलों से सजाया गया, पीले रंग की धोती, हरे धारी का कुर्ता, माथे पर जरी टोपी और नंगा पैर और केला, लाई खाना याद है।"

भूत-प्रेत, अंधविश्वास- भारतीय ग्रामीण समाज का अंधविश्वास पर आस्था है, 'बलचनमा' का मनियार चाचा चुन्नी की बहू को बेटा हो, इसलिए पीपल की जड़ों में पानी चढ़ाता है। दामो ठाकुर ओझा थे, झाड़-फूंक, जादू-टोना, पूजा-पाठ सब जानते थे।

इस प्रकार 'नागार्जुन' जी ने 'बलचनमा' मिथिला से दरभंगा तक की संस्कृति खासकर 'बलचनमा' के गाँव रामपुर और उसके ससुराल शीतलपट्टी की ग्राम्य संस्कृति का वर्णन किया है।

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (1910 से 1996) जिन्होंने 1996 तक अपनी लेखनी चलाई। समीक्षक वर्ग जिस प्रकार प्रेमचंद को ग्रामीण समाज का चतुर चितेरा मानता है, उसी प्रकार 'अश्क' को मध्यमवर्गीय समाज-जीवन का चतुर चितेरा मानता है।

'गिरती दीवारें' उपन्यास मध्यमवर्गीय समाज की परम्पराओं, मान्यताओं एवं संस्कारों में जकड़ी हुई जिंदगी का प्रामाणिक दस्तावेज है। यह उपन्यास मध्यमवर्गीय भारतीय समाज के संस्कारों, मान्यताओं, परंपराओं, अंधविश्वास की छवि है। इसमें पिता गाली-गलौच करनेवाला फिजुलखर्ची करनेवाला व्यक्ति था, माता सीधी-साधी, सरल, पतिव्रता और भक्तिपरायण स्त्री थीं। वह अपने बच्चों पर उनके पिता की बुरी आदतों का असर ना पड़े इस बात का पूरा ख्याल रखती थीं। बच्चों को स्वावलंबी बनाने तथा जीवन की व्यावहारिकता समझाते हुए अक्सर कहतीं, "खाने में

सालन ज्यादा हो तो रोटी पर चढ़ाकर खाना चाहिए और यदि कम हो तो छुआकर खाना चाहिए।" उपन्यास के नायक चेतन पर बचपन से ही माँ के दिए हुए संस्कारों का प्रभाव था अतः वह परिस्थितियों से समझौतावादी हो गया था। चेतन के पिता ने चेतन का विवाह एक ऐसी कन्या से तय किया जो देखने में अनाकर्षक थी किन्तु पिता का वचन शिरोधार्य करने की संस्कृति के कारण वह उस बेमेल विवाह करने को राजी हो जाता है और चुपचाप बोझिल जिन्दगी जीने पर मजबूर हो जाता है।

अंततः प्रत्येक युग की सभ्यता और संस्कृति अपनी-अपनी समस्याएँ लेकर आती हैं और उपन्यास विधा आज के युग में सबसे अधिक सशक्त साहित्यिक विधा मानी जाती है इसलिए यह आज युगीन सत्य की वाहक भी समझी जाने लगी है। तात्पर्य यह यह है कि उपन्यास संस्कृति को संपूर्णता चित्रित करता है, क्योंकि इसमें परस्पर एकसूत्रता सदैव बनी रहती है। यह एकसूत्रता ही जीवन की समग्रता होती है और यहीं उपन्यास और संस्कृति का अन्योन्याश्रय संबंध स्थापित हो जाता है। यही कारण है कि उपन्यासों में युगीन सांस्कृतिक चेतना की सर्वाधिक अभिव्यक्ति पाई जाती है।

संदर्भ सूची :-

1. हिन्दी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक इतिहास, डॉ. रमेश तिवारी, पृष्ठ- 115
2. आधुनिक हिन्दी उपन्यास साहित्य में संस्कृति, के. एम. मायावंशी, पृष्ठ- 12,46
3. मध्यप्रदेश की जन-जातिय संस्कृति, डॉ. शिवकुमार तिवारी, पृष्ठ- 310
4. बलचनमा, नागार्जुन, पृष्ठ- 129
5. जंगल के फूल, राजेन्द्र अवस्थी, पृष्ठ- 30

हिन्दी विभाग

एस.बी.कला एवं के.सी.पी विज्ञान

महाविद्यालय, विजयपुर

❖❁❖